डब्ल्यू.टी.ओ. और हमारी खाद्य सुरक्षा

सचिन कुमार जैन

दूसरे विश्व युद्ध की विनाशलीला के बाद दुनिया में व्यापार को सहज बनाने के मकसद से व्यापार और शुल्कों पर सामान्य समझौता (जनरल एग्रीमेंट ऑन टैरिफ्स एंड ट्रेड - गैट) नामक समूह अस्तित्व में आया था। यह एक समझौता प्रक्रिया थी जिसमें अंतर्राष्ट्रीय व्यापार को सरल बनाने के लिए चर्चाएं चलाने और इसके बाद सभी देशों के बीच नियम आधारित समझौते करवाने का कार्यक्रम चलाया गया।

50 सालों तक चली इस प्रक्रिया का अंतिम चक्र (वर्ष 1986 से 94) उरुग्वे चक्र के नाम से जाना जाता है। इसी अंतिम चक्र में दुनिया में उदारीकरण और खुली अर्थव्यवस्था को आगे ले जाने के लिए एक नए संगठन को आकार दिया गया, जिसे विश्व व्यापार संगठन (डब्ल्यू.टी.ओ.) कहा जाता है। इस संगठन ने सबसे पहले सूचना और संचार पर समझौते करना शुरू किए।

वर्ष 2000 से डब्ल्यू.टी.ओ. में कृषि और सेवाओं पर चर्चा शुरू हुई। इस पर पहला दस्तावेज़ कतर की राजधानी में नवंबर 2001 में हुई चौथी मंत्री-स्तरीय समझौता बैठक में जारी किया गया। इसके तहत सबसे ज़्यादा ध्यान इस बात पर है कि कृषि और इससे जुड़े क्षेत्रों पर सरकारों द्वारा दी जाने वाली सब्सिडी को कम से कम किया जाए। वास्तव में अमरीका और युरोपीय यूनियन के देश यह चाहते रहे हैं कि विकासशील देश अपने यहां किसानों को दी जाने वाली सहायता कम करें, ताकि खुले बाज़ार में होने वाले व्यापार को बड़ी कम्पनियां और इन देशों की वित्तीय व्यवस्था नियंत्रित कर सकें।

कृषि पर चल रही वार्ताओं पर दस सालों में कोई भी सर्वसम्मत समझौता नहीं हो सका, क्योंकि पहले मसौदे के जारी होने के बाद से यह समझा जाने लगा था कि इन प्रस्तावों को यदि स्वीकार किया गया तो भारत, चीन और अफ्रीका जैसे देश कृषि का व्यवसाय करने वाली कंपनियों और विकसित देशों के लगभग गुलाम हो जाएंगे। एक बार समझौता होने के बाद यदि कोई देश उसका उल्लंघन करता है तो उस पर व्यापारिक प्रतिबंध लगाए जाते हैं। इन्हीं प्रतिबंधों का दबाव भारत जैसे देशों को अमरीका के सामने कूटनीतिक रूप से कमज़ोर बनाता है।

इंडोनेशिया के बाली द्वीप में 3 से 7 दिसम्बर 2013 तक डब्ल्यू.टी.ओ. की नौंवी मंत्री-स्तरीय समझौता बैठक हुई। उल्लेखनीय है कि डब्ल्यू.टी.ओ. को बने 20 साल हो चुके हैं, पर अब तक इसमें एक भी सर्वसम्मत समझौता नहीं हो पाया है। कारण यह है कि अमरीका और युरोपीय यूनियन के देश विकासशील देशों के संसाधनों और बाज़ार का उपयोग अपने फायदे के लिए करना चाहते रहे हैं। इस बार डब्ल्यू.टी.ओ. के अस्तित्व के बने रहने के लिए विकसित देशों को लग रहा था कि बाली में कोई न कोई समझौता होना ही चाहिए। जो मसौदा समझौते के लिए वहां रखा गया था, उसमें एक बिंदु भारत और अन्य विकासशील देशों के खिलाफ था। इस मसौदे में यह चाहा गया था कि विकासशील देश खाद्य सुरक्षा के लिए खर्च की जाने वाली सब्सिडी का आकार कृषि उत्पादन की राशि के 10 प्रतिशत से ज़्यादा नहीं रखेंगे। यदि उन्होंने ऐसा किया तो उनके खिलाफ व्यापारिक प्रतिबंधात्मक कार्रवाई की जा सकेगी।

उल्लेखनीय है कि भारत सरकार देश के भीतर अपने नागरिकों के लिए अपने संवैधानिक ढांचे में यदि हक आधारित खाद्य सुरक्षा कार्यक्रम चलाती है तो डब्ल्यू.टी.ओ. उसे वैश्विक व्यापार के लिए घातक नीति मानता है। बदहाल करने वाली वैश्विक नीतियों के कारण लगभग 3 लाख किसान आत्महत्या कर लेते हैं, तो हमें उनकी रक्षा के लिए कोई भी कदम उठाने से रोका जाता है।

3 दिसम्बर 2013 को जब बाली में इस बैठक का पहला सत्र शुरू हुआ तो भारत के वाणिज्य मंत्री आनन्द कुमार ने बहुत ठोस पक्ष रखा कि हम इस बिंदु पर सहमत नहीं हो सकते हैं, क्योंकि इससे हमारी लोगों के प्रति

प्रतिबद्धता पर गहरा सवाल खड़ा होता है और हम भारत के लोगों के भोजन के अधिकार पर कोई समझौता नहीं करेंगे। बाली बैठक के पहले दिन ही भारत के इस पक्ष से अमरीका, युरोपीय यूनियन और डब्ल्यू.टी.ओ. के माथे पर बल पड़ गए क्योंकि ये तीनों मानते हैं कि किसानों से न्यूनतम समर्थन मूल्य पर सरकारी खरीद होने से भोजन का व्यापार करने वाली उनकी बहुराष्ट्रीय कंपनियों के लिए बेतहाशा मुनाफा कमाने के मौके कम होंगे। वे भारत को नज़रअंदाज़ नहीं कर सकते थे क्योंकि यह दुनिया के सबसे बड़े बाज़ारों और उत्पादकों, दोनों ही श्रेणियों में अग्रणी देश है।

डब्ल्यू.टी.ओ. के महानिदेशक सहित विकसित देशों के नेता भारत पर दबाव बनाते रहे कि यह समझौता हो जाए। इसका एक बड़ा कारण यह था कि इसके पहले कृषि व खाद्य सुरक्षा पर डब्ल्यू.टी.ओ. की मंत्री-स्तरीय बैठकें बिना समझौते के खत्म होती रही हैं। यदि बाली बैठक भी असफल हो जाती तो वैश्विक कारोबार में वर्चस्व बनाए रखने के लिए बना यह मंच खत्म होने की कगार पर पहुंच जाता।

अमरीका लगातार भारत पर दबाव बनाता रहा है कि वह खेती और खाद्य सुरक्षा पर किए जाने वाले खर्च को कम करे। उसका तर्क है कि जब सरकार किसानों को सब्सिडी और लोगों को सस्ता राशन देती है तो इससे व्यापार पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है, और कंपनियों के लाभ कमाने के अवसर कम होते हैं।

दरअसल सच तो यह है कि अमरीका की जनसंख्या भारत की एक चौथाई है और खाद्य सब्सिडी पर भारत अमरीका से तीन चौथाई कम खर्चा करता है। अमरीका 45 खरब रुपए खर्च करके अपने यहां अतिरिक्त पोषण सहायता कार्यक्रम चला कर 4.70 करोड़ लोगों को हर साल 240 किलो अनाज की मदद देता है। इस पर वह 96-480 रुपए प्रति व्यक्ति खर्च करता है। इसके विपरीत भारत, जहां 77 फीसदी लोग 30 रुपए प्रतिदिन से कम खर्च करते हैं, वहां भारत सरकार यदि सार्वजनिक वितरण प्रणाली के तहत 47.5 करोड़ लोगों को 1620 रुपए सालाना खर्च करके 58 किलो सस्ता अनाज देती है तो अमरीका और उनके मित्र देशों को दिक्कत होती है।

डब्ल्यू.टी.ओ. की मंत्री-स्तरीय बैठक से पहले भारत सरकार ने तय किया था कि वह खाद्य सुरक्षा के मुद्दे पर कोई समझौता नहीं करेगी, पर वास्तव में क्या हुआ? क्या सरकार ने बाली में भारत के हितों की रक्षा की? नहीं! ऊपर जो नज़र आ रहा है, वह भीतर की सच्चाई से अलग है। यह माना जा रहा था कि जब तक कृषि-खाद्य सुरक्षा पर सब्सिडी का बिंदु हल न हो जाए, तब तक कोई देश दूसरे देश के खिलाफ यह शिकायत नहीं कर सकेगा; पर जो समझौता हुआ, उसके मुताबिक मात्र कृषि समझौते के प्रावधानों के तहत ही यह सुविधा होगी, सब्सिडी और अन्य सहायता समझौते के सन्दर्भ में अब भी शिकायत और

डब्ल्यू.टी.ओ. दुनिया में व्यापार के लिए अनुकूल माहौल बनाने के नाम पर अपने 160 सदस्य देशों की मंत्री-स्तरीय बैठकें आयोजित करता है। इस तरह की 9वीं बैठक 3 से 6 दिसम्बर 2013 के बीच इंडोनेशिया के बाली में हुई। बाली में हुई इस बैठक से पहले यह तय था कि वहां डब्ल्यू.टी.ओ. द्वारा तय 10 बिंदुओं पर एक सर्वसम्मत समझौता होना है। इन दस बिंदुओं में से एक बिंदु ऐसा था, जो भारत के किसानों और उन 87 करोड़ लोगों के जीवन पर सीधे असर डालने वाला था, जो अनाज की सरकारी खरीद, नए राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा कानून और खेती के काम के दायरे में आते हैं। डब्ल्यू.टी.ओ. (विशेष तौर पर अमरीका) यह चाहता था कि सभी देश कृषि क्षेत्र को दी जाने वाली पूरी सब्सिडी की राशि को कुल कृषि उत्पादन की कीमत के 10 प्रतिशत से ज़्यादा नहीं ले जाएंगे। इसका मतलब यह है कि भारत यदि कुल 100 रुपए का कृषि उत्पादन करता है, तो उसमें सरकारी मदद का हिस्सा 10 रुपए से ज़्यादा नहीं होना चाहिए। यदि ऐसा होता है तो उस देश के ऊपर कार्रवाई की जाएगी। नए समझौते के मुताबिक डब्ल्यू.टी.ओ. की 11वीं बैठक के पहले इस मसले का हल खोजा जाना होगा।

कार्रवाई करने की सम्भावना खुली रखी गई है। इतना ही नहीं भारत यह चाहता था कि कोई भी कार्रवाई तब तक न हो, जब तक कोई स्थाई हल न निकल आए। इस मामले में अमरीका 4 साल की समय सीमा की बात पर अड़ा रहा। वहां यह सहमति बन गई कि सदस्य देश डब्ल्यू.टी.ओ. की 11वीं बैठक होने तक खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए रियायत के मौजूदा स्तर के अनुरूप काम करेंगे, इसका अर्थ यह भी है कि सरकार खाद्य सुरक्षा पर सार्वजनिक व्यय बढ़ा नहीं सकेगी। भारत समेत अन्य विकासशील देशों पर इसके गहरे नकारात्मक प्रभाव पड़ सकते हैं।

यदि खाद्य सुरक्षा पर होने वाले सरकारी खर्च को मौजूदा स्तर तक सीमित रखना पड़ा तो भारत सरकार न्यूनतम समर्थन मूल्य नीति में अब नई फसलें शामिल नहीं कर सकेगी। इतना ही नहीं, किसानों को उनकी उपज के लिए दिया जाने वाला न्यूनतम समर्थन मूल्य बढ़ाया नहीं जा सकेगा। राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा कानून के तहत पोषण की सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए लोगों को खाने का तेल और दाल दिए जाने की मांग होती रही है। अब सरकार इन्हें कानून का हिस्सा नहीं बना पाएगी। इतना ही नहीं, खाद्य सुरक्षा कानून की बहस के दौरान यह तय हुआ था कि एक व्यक्ति के लिए 5 किलो अनाज का मौजूदा प्रावधान भुखमरी दूर करने के लिए पर्याप्त नहीं है, इसे बढ़ाया जाना चाहिए। सरकार ने तब कहा था कि देश में उत्पादन और भण्डारण बढ़ने पर पात्रता को 5 किलो प्रति व्यक्ति से ज़्यादा किया जाएगा, पर बाली में अमरीका समेत विकसित देशों के सामने झुक जाने के बाद यह संभव न होगा, क्योंकि इससे खाद्य सुरक्षा सब्सिडी बढ़ेगी। और तो और, राज्य सरकारें भी अब सस्ते राशन के कार्यक्रम का विस्तार नहीं कर सकेंगी। आज देश के 14 राज्य 16,500 करोड़ रुपए सस्ते राशन कार्यक्रम पर खर्च करते हैं। यदि भारत सरकार इस समझौते को अंतिम रूप से मान लेती है तो अब खाद्य सुरक्षा का और कोई नया कार्यक्रम नहीं लाया जा सकेगा।

हमें यह कहकर फंसा दिया गया है कि यह सुनिश्चित किया जाना होगा कि सरकार का भण्डारण दूसरे देशों की खाद्य सुरक्षा को नकारात्मक रूप से प्रभावित नहीं करेगा, यानी अमरीका यह शिकायत कर सकता है कि भारत का

विश्व व्यापार संगठन के तहत समझौते के लिए दो बॉक्स बनाए गए हैं - अम्बर बॉक्स और ग्रीन बॉक्स। वास्तव में ये दो खाते हैं, जिनमें सब्सिडी का रिकार्ड रखा जाता है। अम्बर बॉक्स में उस सब्सिडी को रखा जाता है, जिसके बारे में यह नियम है कि कोई भी सरकार अपने कृषि उत्पादन के मूल्य के 10 प्रतिशत से ज़्यादा राशि सब्सिडी पर खर्च नहीं करेगी। यदि उसने यह सीमा पार की तो उस पर व्यापारिक प्रतिबंध लगाए जा सकते हैं। अमरीका और युरोपीय देश चाहते हैं कि राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा कानून और न्यूनतम समर्थन मूल्य पर अनाज की खरीदी को अम्बर बॉक्स में रखा जाए, जबकि भारत चाहता है कि इसे ग्रीन बॉक्स में रखा जाए।

डब्ल्यू.टी.ओ. के तहत खाद्य सुरक्षा हेतु लोक भण्डारण पर खर्च की जाने वाली सब्सिडी को ग्रीन बॉक्स में रखा जाता है। इस पर कोई भी सरकार असीमित खर्चा कर सकती है और उस खर्चे को खुले व्यापार के लिए नुकसानदायक नहीं माना जाता है। भारत चाहता है कि सार्वजनिक वितरण प्रणाली और न्यूनतम समर्थन मूल्य पर होने वाले खर्च को भी ग्रीन बॉक्स में रखा जाए क्योंकि इसके तहत व्यापार नहीं किया जाता है, इससे छोटे और मझौले-किसानों को मदद करते हुए हम 87 करोड़ लोगों को भूख से बचाते हैं जो सरकार का संवैधानिक दायित्व भी है। अमरीका कहता है कि भारत किसानों को ज़्यादा न्यूनतम समर्थन मूल्य देकर जो अनाज खरीदता है, वही अनाज कम कीमत पर लोगों को देता है, इससे खुला बाज़ार प्रभावित होता है।

अमरीका अपनी सब्सिडी सीधे उपभोक्ताओं को देता है, जिसका लाभ आखिर में बड़े उत्पादकों को होता है। इसके बारे में वह मानता है कि यह सब्सिडी ग्रीन बॉक्स में इसलिए है क्योंकि इससे वैश्विक बाज़ार को नुकसान नहीं होता है। वह यह सच छिपा जाता है कि आखिर में वह इस सब्सिडी को सिर्फ अपने घरेलू उपभोग पर ही खर्च नहीं कर रहा है, बल्कि बड़े औद्योगिक समूहों को बढ़ावा देने के लिए सरकारी खजाने का उपयोग कर रहा है।

सस्ता राशन कार्यक्रम बांग्लादेश या नेपाल के लिए नुकसानदायक है। आशंका है कि इस प्रावधान से हमारे न्यूनतम समर्थन मूल्य की व्यवस्था टूटना शुरू हो जाएगी। हम जानते हैं कि सरकार के भीतर ही एक वर्ग खाद्य रियायत का विरोध करता रहा है, अब उन्हें बाली समझौते का बहाना भी मिल जाएगा।

विकसित देशों के मीडिया से लेकर अमरीका और युरोप के प्रभावशाली औद्योगिक संगठनों ने यह प्रचार शुरू कर दिया था कि भारत फायदेमंद व्यापार नहीं होने देना चाहता है। अमरीका ने धमकी दी कि यदि खाद्य सब्सिडी पर भारत नहीं मानेगा तो वह अल्प-विकसित देशों के लिए सहायता वाले समझौते भी नहीं करेगा।

यहां कहा जा रहा है कि बाली में भारत के पक्ष की जीत हुई है, पर यह सच नहीं है। आज भारत असमान आर्थिक विकास कर रहा है, उस विकास में समानता लाने के लिए खाद्य सुरक्षा सब्सिडी बढ़ाया जाना ज़रूरी है, जो अब संभव न होगा। हमें यह भी समझना होगा कि डब्ल्यू.टी.ओ., अमरीका, और युरोपीय यूनियन इस बिंदु पर भारत पर इसलिए भी दबाव बना रहे हैं ताकि कृषि और फुटकर व्यापार में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश के लिए ज़्यादा ठोस माहौल उन्हें मिल सके। इस प्रावधान में बंधकर भारत सरकार और राज्य सरकारें किसानों से अनाज की न्यूनतम समर्थन मूल्य पर खरीदी नहीं कर सकेंगी या कम करेंगी इससे बहुराष्ट्रीय कंपनियों के लिए भारतीय खेती में उत्पादन और व्यापार के लिए नए रास्ते खुलेंगे।

हम जानते हैं कि मौजूदा भारत सरकार वैसे भी अनाज के बदले नगद (कैश ट्रांसफर) की योजना लागू करना चाहती है। नए संदर्भ में उसे कैश ट्रांसफर लागू करने का बहाना भी मिलेगा। कुल मिलाकर ऐसा लगता है कि जो भी बाली में हुआ वह अकस्मात नहीं था, भारत सरकार उसके लिए पहले से तैयार थी। यह सरकार की जीत और भारत के लोगों की हार है। ***(स्रोत फीचर्स)***